साहित्य समर्पित विद्यार्थी जीवन
बुद्धम् हिन्दी सभा

बुद्धम्

हिन्दी साहित्य का इतिहास

नवीन संस्करण

- नेट/स्लेट/जे.आर.एफ/पीएच.डी.
- कॉलेज व्याख्याता/ स्कूल व्याख्याता
- **RPSC** द्वितीय श्रेणी अध्यापक
- नवोदय विद्यालय/केन्द्रीय विद्यालय/डी.एस.एस.बी.

तथा समस्त हिन्दी प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए
सरल, संक्षिप्त तथा वन लाइनर हिन्दी साहित्य पुस्तक

डॉ. विजय कुमार पटीर

विषय सूची

क्र.सं.	विषय-इकाई	पृ. सं.
1.	हिन्दी भाषा का उद्‌भव और विकास	7-12
2.	हिन्दी की बोलियाँ	13-20
3.	राजभाषा और राष्ट्रभाषा	21-27
4.	देवनागरी लिपि	28-30
5.	वर्ण विचार	31-37
6.	हिन्दी साहित्य का इतिहास	38-59
7.	आदिकाल	60-86
8.	भक्तिकाल	87-147
9.	रीतिकाल	148-172
10.	आधुनिक काल	173-177
	भारतेन्दु युग	177-188
	द्विवेदी युग	188-206
	छायावादी युग	206-221
	प्रगतिवादी युग	221-227
	प्रयोगवादी युग	227-240
	नयी कविता	240-244
11.	हिन्दी साहित्य की गद्य विधाएँ	245-367
	हिन्दी उपन्यास	245-269
	हिन्दी कहानी	270-285
	हिन्दी नाटक	285-306
	हिन्दी एकांकी	306-311
	हिन्दी निबन्ध	311-322
	हिन्दी आलोचना	322-335
	संस्मरण एवं रेखाचित्र	335-340
	हिन्दी की जीवनी विधा	340-345
	हिन्दी की आत्मकथा	345-349
	यात्रावृत्त साहित्य	349-354
	हिन्दी रिर्पोताज साहित्य	354-355
	डायरी लेखन	355-356
	पत्र साहित्य	356-358
	साक्षात्कार	358-360
	अभिनन्दन ग्रन्थ एवं स्मृति ग्रन्थ	360-361
	हिन्दी साहित्य की पत्र-पत्रिकाएँ	361-367
12.	हिन्दी के प्रमुख साहित्यकारों के उपनाम	367-370
13.	विश्व हिन्दी सम्मेलन	371
14.	भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार	371
15.	भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य शास्त्र	372-460
	अलंकार/अलंकार सिद्धान्त	372-388
	छंद विचार	388-399
	काव्य दोष	399-402
	काव्य हेतु	402-406
	काव्य लक्षण	406-411
	काव्य प्रयोजन	411-414
	काव्य गुण	414-416
	काव्य रीति	416-419
	शब्द शक्ति	419-423
	रस	423-430
	रस निष्पत्ति	430-439
	साधारणीकरण	439-442
	ध्वनि सिद्धान्त	442-448
	वक्रोक्ति सिद्धान्त	448-450
	औचित्य सिद्धान्त	451
	अरस्तू: अनुकरण सिद्धान्त	451-455
	अरस्तू: त्रासदी सिद्धान्त	455-458
	लोंजाइनस: उदात्त की अवधारणा	458-460
16.	काव्य के अन्य तत्त्व	460-466

इकाई-1

हिन्दी का उद्भव और विकास

- भारत में प्रमुख रूप से आर्य परिवार एवं द्रविड़ परिवार की भाषाएँ बोली जाती हैं। उत्तर भारत की भाषाएँ आर्य परिवार की तथा दक्षिण भारत की भाषाएँ द्रविड़ परिवार की हैं। उत्तर भारत की आर्य भाषाओं में संस्कृत सबसे प्राचीन है, जिसका प्राचीनतम रूप ऋग्वेद में संस्कृत सबसे प्राचीन है। इसी की उत्तराधिकारिणी हिन्दी है।
- भारत में चार भाषा परिवार- भारोपीय, द्रविड़, आस्ट्रिक व चीनी-तिब्बती मिलते हैं। भारत में बोलने वालों के प्रतिशत के आधार पर भारोपीय परिवार का सबसे बड़ा भाषा परिवार है।
- हिन्दी भारोपीय/भारत-यूरोपीय के भारतीय-ईरानी शाखा के भारतीय आर्य उपशाखा से विकसित एक भाषा है।
- भारतीय आर्य भाषाओं के काल को मोटे तौर पर तीन कालखण्डों में विभक्त किया गया है-
  1. प्राचीन भारतीय आर्य भाषा काल (1500 ई. पू. से 500 ई. पू. तक)
  2. मध्य भारतीय आर्य भाषा काल (500 ई. पू. से 1000 ई. तक)
  3. आधुनिक भारतीय आर्य भाषा काल (1000 ई. से अब तक)
- प्राचीन भारतीय आर्य भाषा काल में वैदिक संस्कृत एवं लौकिक संस्कृत दो भाषाएँ थीं। चारों वेद, ब्राह्मण ग्रन्थ, उपनिषद वैदिक संस्कृत में लिखे गये, इनमें भाषा का एक रूप नहीं है। लौकिक संस्कृत में रामायण, महाभारत लिखे गये। इस काल में भाषा योगात्मक थी, शब्दों में धातु रूप सुरक्षित थे। भाषा में संगीतात्मकता थी, पदों का स्थान निश्चित नहीं था। शब्द भण्डार में तत्सम शब्दों की प्रचुरता थी।
- मध्य भारतीय आर्य भाषा काल में तीन भाषाएँ विकसित हुईं-
  1. प्रथम प्राकृत-पालि भाषा-500 ई. पू. से 1 ई. तक-भारत की प्रथम देश भाषा।
  2. द्वितीय प्राकृत-प्राकृत भाषा 1 ई. से 500 ई. तक।
  3. तृतीय प्राकृत-अपभ्रंश भाषा- 500 ई. से 1000 ई. तक।
- पालि को मागधी भाषा भी कहा जाता है। यह बौद्ध धर्म की भाषा है। बौद्ध साहित्य पालि भाषा में लिखा गया है। त्रिपिटक पालि में लिखे गये हैं। त्रिपिटकों के नाम हैं- सुत्त पिटक, विनय पिटक, अभिधम्म पिटक।
- प्राकृत भाषा बोलचाल की भाषा होने के कारण पंडितों में प्रचलित नहीं थी। संस्कृत नाटकों के अधम पात्र इस बोली का प्रयोग करते थे। जैन साहित्य प्राकृत भाषा में लिखा गया है। प्राकृत भाषा के पाँच प्रमुख भेद थे-

1. शौरसेनी प्राकृत-जो मथुरा या शूरसेन जनपद में बोली जाती थी, इसे मध्य देश की बोली भी कहा जाता है। 2. पैशाची प्राकृत-यह उत्तर पश्चिम में कश्मीर के आसपास की भाषा थी। 3. महाराष्ट्री प्राकृत-इसका मूल स्थान महाराष्ट्र था। 4. अर्द्धमागधी प्राकृत-यह मागधी और शौरसेनी के बीच के क्षेत्र की भाषा थी। 5. मागधी प्राकृत-यह मगध के आसपास प्रचलित भाषा थी।

- हिन्दी भारोपीय परिवार की भाषा है। भारोपीय परिवार की भाषाओं को केंटुम और शतम् में प्रो. अस्कोली ने 1870 ई. में विभाजन किया।
- भारोपीय परिवार की भाषाएँ आकृति मूलक दृष्टि से श्लिष्ट योगात्मक हैं।
- हिन्दी भाषा आकृति मूलक दृष्टि में श्लिष्ट योगात्मक (वियोगात्मक) है।
- विश्व में लगभग 3000 (2796) भाषाएँ बोली जाती हैं।

- अपभ्रंश भाषा का प्रयोग 500 ई. से 1000 ई. तक हुआ। इस भाषा को अवहठ, अवहट्ठ, अवहत्थ, देशभाषा, देशीभाषा आदि अनेक नामों से पुकारा गया। अपभ्रंश का शाब्दिक अर्थ है- बिगड़ा हुआ या गिरा हुआ। जब भाषा का रूप संस्कृत न रहकर बोलचाल का सामान्य रूप हो जाता है तो विद्वानों की दृष्टि में वह भाषा बिगड़ी हुई मानी जाती है और तब वे उसे अपभ्रंश की संज्ञा देते हैं।
- हिन्दी की आदि जननी संस्कृत है। संस्कृत, पालि, प्राकृत भाषा से होती हुई अपभ्रंश तक पहुँचती है। फिर अपभ्रंश, अवहट्ठ से प्राचीन या प्रारम्भिक हिन्दी का रूप लेती है। इस प्रकार हिन्दी भाषा के इतिहास का आरम्भ अपभ्रंश से माना जाता है।
- अपभ्रंश भाषा का प्रारम्भ कब से हुआ, इस संबंध में तीन मत हैं-

1. डॉ. उदय नारायण तिवारी ने अपनी पुस्तक 'हिन्दी भाषा का उद्गम और विकास' में अपभ्रंश का जन्म काल 700 ई. स्वीकार किया है। 2. डॉ. नामवर सिंह ने 'हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योगदान' में अपभ्रंश का जन्म काल 700 ई. स्वीकार किया है। 3. डॉ. भोलानाथ तिवारी ने अपभ्रंश का जन्म 500 ई. के आसपास माना है।

- हिन्दी का विकास क्रम-

  संस्कृत (अलौकिक- लौकिक) - पालि- प्राकृत-अपभ्रंश- अवहट्ठ- प्राचीन/प्रारम्भिक हिन्दी-खड़ी बोली हिन्दी।
- अपभ्रंश भाषा का प्रयोग कालिदास ने नाटक विक्रमोर्वशीय में निम्न वर्ग के पात्रों द्वारा किया गया है। छठी शताब्दी के अलंकार वादी आचार्य भामह ने भी अपभ्रंश का उल्लेख संस्कृत एवं प्राकृत के साथ करते हुए इसे काव्योपयोगी भाषा बताया है।
- अपभ्रंश के योग से बनी शुद्ध राजस्थानी भाषा के साहित्यिक रूप को आचार्य शुक्ल ने डिंगल कहा है।
- अवहट्ठ भाषा 'परिनिष्ठित अपभ्रंश' भाषा थी।
- अपभ्रंश व्याकरण के रचयिता हेमचन्द्र थे।
- अपभ्रंश का साहित्य में प्रयोग 1200 ई. तक हुआ, यद्यपि इसका काल 500 ई. से 1000 ई. तक ही माना जाता है। 1000 ई. के आसपास हिन्दी का प्रयोग साहित्य में प्रारम्भ हो चुका था, किन्तु कुछ काल तक बाद में भी अपभ्रंश का प्रयोग साहित्य में होता रहा।
- भाषा के अर्थ में अपभ्रंश का सर्वप्रथम प्रयोग छठी शताब्दी में मिलता है।
- हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपभ्रंश को हिन्दी नहीं माना है, किन्तु परवर्ती अपभ्रंश साहित्य को हिन्दी के आदिकालीन साहित्य में सम्मिलित करने के पक्ष में है।
- चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, राहुल सांकृत्यायन, आचार्य शुक्ल ने अपभ्रंश को पुरानी हिन्दी माना है।
- अपभ्रंश भाषा की प्रमुख विशेषता वर्णों की द्वित्व प्रवृत्ति है।
- आधुनिक आर्य भाषाओं का विकास अपभ्रंश भाषा से हुआ है। हिन्दी का विकास भी अपभ्रंश से ही हुआ है। अत: हिन्दी की जननी अपभ्रंश है। उत्तर भारत में अपभ्रंश के सात क्षेत्रीय रूपान्तरण प्रचलित थे, जिनमें आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का कालान्तर में विकास हुआ जो इस प्रकार हैं-

1. शौरसेनी अपभ्रंश- पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती, 2. पैशाची अपभ्रंश- पंजाबी लहंदा, 3. ब्राचड़ अपभ्रंश - सिंधी, 4. खस अपभ्रंश - पहाड़ी, 5. महाराष्ट्री अपभ्रंश - मराठी, 6. अर्द्धमागधी अपभ्रंश - पूर्वी हिन्दी, 7. मागधी अपभ्रंश - बिहारी, उड़िया, बंगला, असमिया।

- हिन्दी भाषा की उत्पत्ति मूलत: शौरसेनी अपभ्रंश से हुई है।
- अपभ्रंश के परवर्ती रूप को पुरानी हिन्दी सर्वप्रथम चन्द्रधर शर्मा गुलेरी ने कहा।
- किशोरी दास वाजपेयी ने अपभ्रंश भाषा को 'ण-ण भाषा' कहा है।
- प्रसिद्ध अपभ्रंश साहित्यकार हेमचन्द्र का समय 12वीं शताब्दी है।
- आचार्य शुक्ल के अनुसार- 'आदिकाल की असंदिग्ध सामग्री जो कुछ प्राप्त है उसकी भाषा अपभ्रंश अर्थात् प्राकृताभास हिन्दी है।'
- आचार्य शुक्ल ने अपभ्रंश को प्राकृताभास हिन्दी कहा है।

इकाई- 2

हिन्दी की बोलियाँ

- हिन्दी भाषी क्षेत्र/हिन्दी क्षेत्र/हिन्दी पट्टी-हिन्दी पश्चिम में अम्बाला (हरियाणा) से लेकर पूर्व में पूर्णिया (बिहार) तक तथा उत्तर में बद्रीनाथ, केदारनाथ (उत्तराखण्ड) से लेकर दक्षिण में खंडवा (मध्य प्रदेश) तक बोली जाती है। इसे हिन्दी भाषी क्षेत्र या हिन्दी क्षेत्र के नाम से जाना जाता है। इस क्षेत्र के अन्तर्गत नौ राज्य-उत्तरप्रदेश, उत्तराखण्ड, बिहार, झारखण्ड, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, राजस्थान, हरियाणा व हिमाचल प्रदेश तथा केन्द्र शासित प्रदेश (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र) दिल्ली आते हैं। इस क्षेत्र में भारत की कुल जनसंख्या के 43% लोग रहते हैं।
- बोली - एक छोटे क्षेत्र में बोली जाने वाली भाषा बोली कहलाती है। बोली में साहित्य रचना नहीं होती।
- उपभाषा-अगर किसी बोली में साहित्य रचना होने लगती हैं और क्षेत्र का विस्तार हो जाता है तो वह बोली न रहकर उपभाषा बन जाती है।
- भाषा- साहित्यकार जब उस उपभाषा को अपने साहित्य के द्वारा परिनिष्ठित सर्वमान्य रूप प्रदान कर देते हैं तथा उसका और क्षेत्र विस्तार हो जाता है तो वह भाषा कहलाने लगती है। अर्थात् भाषा एक बहुत बड़े भू-भाग में बोली जाती है।
- एक भाषा के अन्तर्गत कई बोलियाँ हो सकती हैं, किन्तु एक बोली के अन्तर्गत कई भाषाएँ नहीं हो सकतीं। उदाहरण के लिए, हिन्दी भाषा के अन्तर्गत 17 बोलियाँ हैं। बोली के अन्तर्गत उपबोलियाँ हो सकती हैं, जैसे- अवधी के अन्तर्गत वैसवाड़ी एक उपबोली है।
- भाषा का एक मानक रूप होता है किन्तु बोली का नहीं।
- भाषा का प्रयोग साहित्य, शिक्षा, शासन-प्रशासन में होता है, जबकि बोली दैनिक बोलचाल में तथा लोक साहित्य में प्रयुक्त होती है।
- बोलियों के संगठन से भाषा बनती है और भाषा के विघटन से बोलियाँ बनती हैं।
- सर्वप्रथम एक अंग्रेज प्रशासनिक अधिकारी जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन ने 1927 ई. में अपनी पुस्तक 'भारतीय भाषा सर्वेक्षण' में हिन्दी का उपभाषाओं व बोलियों में वर्गीकरण प्रस्तुत किया।
- उत्तर भारत में अपभ्रंश के सात क्षेत्रीय रूपान्तरण प्रचलित थे, जिनसे आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का कालान्तर में विकास हुआ। इनका विवरण इस प्रकार है-

अपभ्रंश का क्षेत्रीय रूप	विकसित होने वाली आर्य भाषाएँ
शौरसेनी	पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती
पैशाची	लहंदा, पंजाबी
ब्राचड़	सिंधी
महाराष्ट्री	मराठी
मागधी	बिहारी, बांग्ला, उड़िया, असमिया
अर्धमागधी	पूर्वी हिन्दी
खस	पहाड़ी

हिन्दी एवं अन्य भारतीय आर्य भाषाओं का विकास अपभ्रंश के क्षेत्रीय भेदों से हुआ। इस विवेचन के आधार पर भाषाओं के क्रमिक विकास को निम्न रूप में समझा जा सकता है-

वैदिक संस्कृत - संस्कृत - पालि - प्राकृत - अपभ्रंश - हिन्दी एवं अन्य आधुनिक भारतीय आर्य भाषाएँ।

- हिन्दी भाषा की उत्पत्ति मूलतः शौरसेनी अपभ्रंश से हुई है।
- हिन्दी के अन्तर्गत आने वाली उपभाषाओं एवं बोलियों का विवरण इस प्रकार है-

	उपभाषाएँ	बोलियाँ
1.	पश्चिमी हिन्दी	खड़ी बोली (कौरवी), ब्रजभाषा, बुंदेली, हरियाणवी (बांगरू), कन्नौजी।
2.	पूर्वी हिन्दी	अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी
3.	राजस्थानी	पश्चिमी राजस्थानी (मारवाड़ी), पूर्वी राजस्थानी (जयपुरी), उत्तरी राजस्थानी (मेवाती) दक्षिणी राजस्थानी (मालवी)
4.	पहाड़ी	गढ़वाली, कुमांयुनी
5.	बिहारी	मैथिली, मगही, भोजपुरी।

इस प्रकार हिन्दी क्षेत्र में पाँच उपभाषाएँ और सत्रह बोलियाँ सम्मिलित हैं।

नोट - कुछ विद्वान् पहाड़ी के अन्तर्गत नेपाली को भी मानते हैं जिससे 18 बोलियाँ भी मानी जा सकती हैं।

इन बोलियों का वर्गीकरण इस प्रकार है-

1. खड़ी बोली - आकार बहुला या आकारान्त बोली है। मूल नाम कौरवी। अन्य नाम बोलचाल की हिन्दुस्तानी सर हिन्दी, वर्नाक्यूलर खड़ी बोली है। खड़ी बोली का क्षेत्र देहरादून, सहारनपुर, मुजफ्फर नगर, मेरठ, बिजनौर, रामपुर तथा मुरादाबाद है। कुरु जनपद तथा दिल्ली, मेरठ के आसपास का क्षेत्र। 1.50 करोड़ से 2 करोड़ तक बोलने वालों की संख्या। मानक हिन्दी का विकास इसी खड़ी बोली से हुआ है। हिन्दी और उर्दू दोनों ही खड़ी बोली की बेटियाँ हैं। खड़ी बोली की प्रधान प्रवृत्ति है- शब्दों का आकारान्त होना। जैसे- आण, खोट्या, लोट्या आदि। इसके अतिरिक्त व्यंजन द्वित्व की प्रवृत्ति भी इसी बोली की प्रमुख विशेषता है। जैसे- बेट्टा, बाप्पू, उप्पर, गड्डी आदि। खड़ी बोली में न के स्थान पर 'ण' का प्रयोग होता है। कुछ विशिष्ट अव्यय हैं- कद (कब), जद (जब), इब (अब), होर (और), कदी (कभी) आदि। खड़ी बोली में प्रयुक्त सर्वनाम मुज (मुझ), म्हारा (हमारा), थारा (तुम्हारा), कुच्छ (कुछ), विस्का (उसका), कोण (कौन)। कुछ लोगों ने इसका सम्बन्ध खड़ी बोली में अधिकता से प्रयुक्त खड़ी पायी '।' (गया, बड़ा, का) तथा उसके ध्वन्यात्मक प्रभाव कर्कशता से जोड़ा है। राहुल सांकृत्यायन एवं डॉ. भोलानाथ तिवारी ने खड़ी बोली को कौरवी नाम भी दिया है।

2. ब्रजभाषा - पश्चिमी हिन्दी की बोलियों के अध्ययन के लिए ब्रजभाषा कुंजी का काम करती है। यह ओकार बहुला या ओकारान्त बोली है। इसका केन्द्र मथुरा है। इसका क्षेत्र आगरा, मथुरा, अलीगढ़, एटा, फिरोजाबाद जनपदों के अतिरिक्त हरियाणा का गुड़गाँव जिला, राजस्थान का भरतपुर और धौलपुर जिला माना जाता है उत्तर प्रदेश के बदायूँ एवं मैनपुरी जिले के कुछ भागों में भी ब्रजभाषा बोली जाती है।

एक मोटे अनुमान से ब्रजभाषा बोलने वालों की संख्या लगभग चार करोड़ होगी। ब्रजभाषा की प्रमुख विशेषता है- इसकी औकारान्त प्रवृत्ति। जैसे- आयौ, गयौ, खायौ, कारौ, पीरौ, अच्छौ, बुरौ आदि। उत्तम पुरुष एक वचन में हौं का प्रयोग (मैं के लिए) होता है। जैसे- हौं ना जातु (मैं नहीं जाता)। क्यों के स्थान पर चौं का प्रयोग ब्रजभाषा में होता है। यथा-तुम चौं नहीं आए (तुम क्यों नहीं आए)। भूतकाल की सहायक क्रिया के लिए हो, ही, हे का प्रयोग होता है। जैसे- बु जातु हो (वह जाता था)। भविष्यकाल की क्रियाओं में 'ग' वाले रूप चलते हैं। जैसे आङ्गे, खाङ्गे, जाङ्गे। संख्यावाचक विशेषण भी विशिष्ट हैं। यथा एकु, द्वै, तीनि, चारि, छै, ग्यारा, बारा, चउदा, किरोड़ आदि।

- देश के बाहर ताज्जुबेकिस्तान में ब्रजभाषा बोली जाती है जिसे ताज्जुबेकी ब्रजभाषा कहा जाता है।

3. बुन्देली - यह ओकार बहुला भाषा है। बुन्देलखण्ड में बोली जाने वाली 'बुन्देली' का क्षेत्र झाँसी, जालौन, हमीरपुर, ओरछा, भोपाल, सागर, नरसिंहपुर, सिवनी तथा होशांगाबाद जिलों तक फैला है। इस प्रकार दक्षिणी उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश का मध्य भाग इस बोली के क्षेत्र में समाविष्ट है। इसे बोलने वालों की संख्या लगभग दो करोड़ होगी। इसमें लोक साहित्य पर्याप्त मात्रा में रचा गया है।

इकाई- 3

राजभाषा और राष्ट्रभाषा

- राजभाषा का अर्थ है संविधान द्वारा स्वीकृत सरकारी कामकाज की भाषा। किसी देश का सरकारी कामकाज जिस भाषा में करने का कोई निर्देश संविधान के प्रावधानों द्वारा दिया जाता है, वह उस देश की राजभाषा कही जाती है।
- भारत के संविधान में हिन्दी भाषा को राजभाषा का दर्जा दिया गया है, किन्तु साथ ही यह भी प्रावधान किया गया है कि अंग्रेजी भाषा में भी केन्द्र सरकार अपना कामकाज तब तक कर सकती है जब तक हिन्दी पूरी तरह राजभाषा के रूप में स्वीकार्य नहीं हो जाती।
- प्रारम्भ में संविधान लागू होते समय सन् 1950 में यह समय सीमा 15 वर्ष के लिए थी अर्थात् अंग्रेजी का प्रयोग सरकारी कामकाज के लिए सन् 1965 तक ही हो सकता था, किन्तु बाद में संविधान संशोधन के द्वारा इस अवधि को अनिश्चित काल के लिए बढ़ा दिया गया। यही कारण है कि संविधान द्वारा हिन्दी को राजभाषा घोषित किये जाने पर भी केन्द्र का अधिकांश सरकारी कामकाज अंग्रेजी में हो रहा है और वह अभी तक अपना वर्चस्व बनाए हुए है।
- भारत के दस राज्य उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, दिल्ली, हरियाणा, मध्यप्रदेश, राजस्थान, बिहार, झारखण्ड, छत्तीसगढ़ एवं उत्तरांचल, हिन्दी भाषी प्रदेश है।
- किसी देश की राष्ट्रभाषा उस देश के बहुसंख्यक लोगों की भाषा को माना जाता है। जब कोई भाषा अपने महत्त्व के कारण राष्ट्र के विस्तृत भू-भाग में जनता द्वारा अपना ली जाती है तो वह स्वत: राष्ट्रभाषा का पद प्राप्त कर लेती है। हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा है।
- राजभाषा का अभिप्राय है- देश के संविधान द्वारा स्वीकृत वह भाषा, जिसमें संघीय सरकार अपना कामकाज करती है अर्थात् जो संवैधानिक तौर पर घोषित सरकारी कामकाज की भाषा होती है।
- भारतीय संविधान में अनुच्छेद 343 से 351 तक राजभाषा विषयक प्रावधान किये गये हैं। और यह स्पष्ट हो गया है कि संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी।
- संविधान सभा के सम्मुख एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह था कि भारत की राजभाषा किस भाषा को बनाया जाये। पर्याप्त विचार-विमर्श के उपरान्त 14 सितम्बर, 1949 को संविधान सभा ने एक मत से यह निर्णय लिया कि हिन्दी भारत की राजभाषा होगी। इसलिए हम लोग प्रतिवर्ष 14 सितम्बर को हिन्दी दिवस मनाते हैं।
- भारतीय संविधान 26 जनवरी, 1950 को लागू हुआ, अत: 15 वर्षों की अवधि 26 जनवरी 1965 को समाप्त हो गई किन्तु राजनीतिक दबावों के चलते सरकार ने इस अवधि को आगे बढ़ा दिया।
- संविधान के भाग 17 के अध्याय 1 की धारा 343 (i) के अनुसार: संघ की राजभाषा हिन्दी का रूप भारतीय अंकों का अन्तर्राष्ट्रीय रूप होगा। किन्तु इसी धारा के अन्तर्गत यह प्रावधान कर दिया गया कि संविधान के प्रारम्भ होने से 15 वर्ष की अवधि के लिए (1965 तक) उन सब राजकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग भी होता रहेगा, जिनके लिए वह पहले से प्रयुक्त होती रही हो।
- अनुच्छेद 344, राष्ट्रपति द्वारा राजभाषा आयोग एवं समिति के गठन से सम्बन्धित है।
- अनुच्छेद 345, राज्य की राज्य भाषा उसकी प्रादेशिक भाषा/भाषाएँ या हिन्दी होगी तथा ऐसी व्यवस्था होने तक अंग्रेजी का प्रयोग जारी रहेगा।
- अनुच्छेद- 346, एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच या किसी राज्य और संघ के बीच पत्रादि की राजभाषा (संघ द्वारा तत्समय प्राधिकृत भाषा: आपसी करार होने के दो राज्यों के बीच हिन्दी)।
- अनुच्छेद - 347, किसी राज्य की जनसंख्या के किसी अनुभाग द्वारा बोली जाने वाली भाषा के संबंध में विशेष उपबन्ध।
- अनुच्छेद 345, 346, 347 में प्रादेशिक भाषाओं सम्बन्धी प्रावधान हैं।

- अनुच्छेद 348, में उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालयों, संसद और विधान मण्डलों में प्रस्तुत विधेयकों की भाषा के सम्बन्ध में विस्तार से प्रकाश डाला गया है।
- अनुच्छेद 349, में भाषा से संबंधित कुछ विधियाँ अधिनियमित करने के लिए विशेष प्रक्रिया (राजभाषा संबंधी कोई भी विधेयक राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी के बिना पेश नहीं किया जा सकता और राष्ट्रपति भी आयोग की सिफारिशों पर विचार करने के बाद ही मंजूरी दे सकेगा।
- अनुच्छेद 350, जन साधारण की शिकायतें दूर करने के लिए आवेदन में प्रयुक्त की जाने वाली भाषा तथा प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा सुविधाएँ देने और भाषायी अल्पसंख्यकों के बारे में दिशा-निर्देश का प्रावधान किया गया है।
- अनुच्छेद 351 में सरकार के उन कर्तव्यों एवं दायित्वों का उल्लेख किया गया है जिनका पालन हिन्दी के प्रचार-प्रसार और विकास के लिए उसे करना है।
- इसके अतिरिक्त राष्ट्रपति ने अधिसूचना संख्या 59/2/54 दिनांक 3-12-55 के द्वारा सरकारी प्रयोजनों के हिन्दी भाषा आदेश 1955 जारी किया है, जिसके द्वारा अंग्रेजी भाषा के साथ-साथ हिन्दी का प्रयोग निम्नलिखित कार्यों हेतु किया जा सकता है-

1. जनता के पत्र व्यवहार के लिए। 2. प्रशासनिक रिपोर्ट, सरकारी संकल्प, संसद में प्रस्तुत की जाने वाली रिपोर्ट के लिए। 3. हिन्दी भाषी राज्यों के साथ पत्र व्यवहार के लिए। 4. अन्य देश की सरकारों और अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के साथ पत्र व्यवहार के लिए। 5. संधियों व ऋणों के लिए।

- संविधान के अनुच्छेद 344 के अनुपालन में राष्ट्रपति द्वारा 7 जून, 1955 को राजभाषा आयोग का गठन बाल गंगाधर खेर (बी. जी. खेर) की अध्यक्षता में किया गया। विभिन्न राज्यों से इसके 20 सदस्य मनोनीत किए गये। आयोग ने अपनी 19 सिफारिशें प्रस्तुत कीं।
- राजभाषा अधिनियम, 1976 के अन्तर्गत हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग करने के लिए कुछ प्रभावी कदम उठाये गये हैं। इस अधिनियम के मुख्य प्रावधान इस प्रकार हैं-

1. भारत संघ के राज्य तीन वर्गों में विभक्त किये गये हैं-

   (क) उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, राजस्थान, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश और संघ क्षेत्र दिल्ली (ये सभी हिन्दी भाषी प्रदेश हैं)

   (ख) इस श्रेणी में पंजाब, गुजरात, महाराष्ट्र, चण्डीगढ़, अण्डमान-निकोबार को रखा गया है।

   (ग) शेष सभी प्रदेश एवं संघ शासित क्षेत्र 'ग' श्रेणी में रखे गये।

   इस वर्गीकरण के उपरान्त यह निर्देश दिया गया कि -

1. केन्द्रीय कार्यालयों से 'क' श्रेणी के राज्यों को भेजे जाने वाले सभी पत्र हिन्दी में देवनागरी लिपि में भेजे जायेंगे। यदि कोई पत्र अंग्रेजी में भेजा जा रहा है, तो हिन्दी में अनुवाद भी अवश्य भेजा जायेगा।
2. 'ख' श्रेणी के राज्यों से पत्र-व्यवहार हिन्दी-अंग्रजी दोनों भाषाओं में किया जा सकता है।
3. 'ग' श्रेणी के राज्यों से पत्र-व्यवहार अंग्रेजी में किया जायेगा।
4. केन्द्रीय कार्यालयों में हिन्दी में आगत पत्रों का उत्तर अनिवार्यत: हिन्दी में दिया जायेगा।
5. केन्द्र सरकार के कर्मचारी हिन्दी या अंग्रेजी में टिप्पणी लिख सकेंगे।
6. केन्द्र सरकार के कार्यालयों में सभी प्रपत्र, रजिस्टर, हिन्दी, अंग्रेजी दोनों में होंगे।
7. जहाँ 80 प्रतिशत से अधिक कर्मचारी हिन्दी में कार्य करते हों, वहाँ टिप्पणी, प्रारूप आदि काम केवल हिन्दी में ही करने को कहा जा सकता है।
8. प्रत्येक कार्यालय के प्रधान का यह दायित्व होगा कि वह राजभाषा अधिनियमों एवं उपबन्धों का समुचित अनुपालन कराये।

- दो व्यक्ति जो विभिन्न भाषा-भाषी हों, भाषा में बात करते हैं, जिसे दोनों अच्छी तरह समझ सकते हैं। इस भाषा को ही सम्पर्क भाषा कहा जाता है।

इकाई– 4

देवनागरी लिपि

- उच्चरित ध्वनि संकेतों की सहायता से भाव या विचार की अभिव्यक्ति 'भाषा' कहलाती है। जबकि लिखित ध्वनि (वर्ण) संकेतों को लिपि कहते हैं। हिन्दी जिस लिपि में लिखी जाती है उसे नागरी या देवनागरी लिपि कहा जाता है। भाषा श्रव्य होती है जबकि लिपि दृश्य।
- भारत की सभी लिपियाँ ब्राह्मी लिपि से ही निकली हैं। ब्राह्मी लिपि का प्रयोग वैदिक आर्यों ने शुरू किया।
- ब्राह्मी लिपि का प्राचीनतम नमूना 5वीं सदी BC का है जो बौद्ध कालीन है।
- गुप्तकाल के आरम्भ में ब्राह्मी के दो भेद हो गए- उत्तरी ब्राह्मी व दक्षिणी ब्राह्मी। दक्षिणी ब्राह्मी से तमिल लिपि/कलिंग लिपि, तेलुगू-कन्नड़ लिपि (तमिलनाडु), मलयालम लिपि (ग्रन्थ लिपि से विकसित) का विकास हुआ।
- उत्तरी ब्राह्मी से नागरी लिपि का विकास-

  उत्तर ब्राह्मी → गुप्तलिपि - सिद्ध मातृका लिपि - कुटिल लिपि - नागरी, शारदा - गुरुमुखी, कश्मीरी, लहंदा, टाकरी

  350 ई. तक - 4-5 वीं सदी - 6वीं सदी - 8वीं-9वीं सदी तक
- देवनागरी लिपि का समुचित विकास 8वीं शती में हुआ। गुजरात के राष्ट्रकूट नरेशों की यही लिपि थी। 10वीं-12वीं सदी के बीच इसी प्राचीन नागरी से उत्तरी भारत की अधिकांश आधुनिक लिपियों का विकास हुआ। इसकी दो शाखाएँ मिलती हैं- पश्चिमी व पूर्वी। पश्चिमी शाखा की सर्वप्रमुख/प्रतिनिधि लिपि देवनागरी लिपि है।

  नागरी
  - पश्चिमी शाखा-देवनागरी, राजस्थानी, गुजराती, महाजनी, कैथी।
  - पूर्वी शाखा-बांग्लालिपि, असमी, उड़िया।
- देवनागरी लिपि का प्रयोग हिन्दी, मराठी, नेपाली भाषाओं को लिखने में होता है। इसके अतिरिक्त संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश भाषाएँ भी देवनागरी लिपि में ही लिखी जाती हैं।
- ब्राह्मी लिपि के कई क्षेत्रीय रूपान्तर थे। इनमें से एक रूपान्तर उत्तरी शाखा के रूप में था जिसे नागरी कहते थे। इसी से देवनागरी लिपि का विकास हुआ है।
- कुछ लोगों का मत है कि यह गुजरात के नागर ब्राह्मणों की लिपि थी तथा इसके तान्त्रिक चिह्न देवनागर के अनुरूप चौकोर हैं इसलिए इसे देवनागरी कहने लगे। किन्तु यह मत अधिक पुष्ट नहीं है।
- ब्राह्मी लिपि की उत्तरी शाखा नागरी का प्रयोग जब देवभाषा संस्कृत के लिए होने लगा तो इस लिपि को देवनागरी लिपि कहा जाने लगा।
- जान गिलक्राइस्ट- हिन्दी भाषा और फारसी लिपि का घालमेल फोर्ट विलियम कॉलेज (1800) कलकत्ता की देन थी। फोर्ट विलियम कॉलेज के हिन्दुस्तानी विभाग के सर्वप्रथम अध्यक्ष जान गिलक्राइस्ट थे। उनके अनुसार हिन्दुस्तानी की तीन शैलियाँ थीं- दरबारी या फारसी शैली, हिन्दुस्तानी शैली व हिन्दुवी शैली। वे फारसी शैली को दुरूह तथा हिन्दवी शैली को गँवारू मानते थे। इसलिए उन्होंने हिन्दुस्तानी शैली को प्राथमिकता दी। उन्होंने हिन्दुस्तानी के जिस रूप को बढ़ावा दिया, उसका मूलाधार तो हिन्दी ही था किन्तु उसमें अरबी-फारसी शब्दों की बहुलता थी और वह फारसी लिपि में लिखी जाती थी। गिलक्राइस्ट ने हिन्दुस्तानी के नाम पर असल में उर्दू का ही प्रचार किया।

राजस्थानी ग्रन्थागार

- विलियम प्राइस- 1823 ई. में हिन्दुस्तानी विभाग के अध्यक्ष के रूप में विलियम प्राइस की नियुक्ति हुई। उन्होंने हिन्दुस्तानी के नाम पर हिन्दी (नागरी लिपि पर) बल दिया। प्राइस ने गिलक्राइस्ट द्वारा जनित भाषा-संबंधी भ्रांति को दूर करने का प्रयास किया। लेकिन प्राइस के बाद कॉलेज की गतिविधियों में कोई विशेष प्रगति नहीं हुई।
- बीम्स साहब उर्दू का और ग्राउस साहब हिन्दी का समर्थन करने वालों में प्रमुख थे।
- राजा शिव प्रसाद 'सितारे-हिन्द' का लिपि संबंधी प्रतिवेदन (1868 ई.) फारसी लिपि के स्थान पर नागरी लिपि और हिन्दी भाषा का पहला प्रयास राजा शिव प्रसाद का 1868 ई. में उनके 'लिपि संबंधी प्रतिवेदन' मेमोरण्डम कोर्ट कैरेक्टर इन द अपर प्रोविन्स ऑफ इण्डिया से आरम्भ हुआ।
- जान शोर-एक अंग्रेज अधिकारी फ्रेडरिक जान शोर ने फारसी तथा अंग्रेजी दोनों भाषाओं के प्रयोग पर आपत्ति व्यक्त की थी और न्यायालय में हिन्दुस्तानी भाषा और देवनागरी लिपि का समर्थन किया था।
- प्रचार की दृष्टि से वर्ष 1874 ई. में मेरठ में 'नागरी प्रकाश' पत्रिका प्रकाशित हुई। वर्ष 1861 में देवनागरी-प्रचारक तथा 1888 ई. में देवनागरी गजट पत्र प्रकाशित हुए।

देवनागरी लिपि : सुधार और संशोधन

देवनागरी लिपि में सुधार और संशोधन के जो प्रयास समय-समय पर किए गए, उन्हें ही देवनागरी का विकास कहते हैं। इस सम्बन्ध में निम्न तथ्य उल्लेखनीय हैं-

(1) सर्वप्रथम बम्बई राज्य के महादेव गोविन्द रानाडे ने लिपि सुधार समिति गठित की। (2) महाराष्ट्र साहित्य परिषद् पुणे में लिपि सुधार योजना बनाई गई। (3) बीसवीं शती के प्रारम्भ में लोकमान्य तिलक ने अपने पत्र 'केसरी' में लिपि सुधार की चर्चा की। (4) तदुपरान्त वीर सावरकर, महात्मा गाँधी, विनोबा भावे, काका कालेलकर और आचार्य नरेन्द्र देव ने लिपि में सुधार एवं संशोधन के प्रयास किए। काका कालेलकर ने 'अ' की बारहखड़ी का सुझाव देकर स्वर ध्वनियों की संख्या कम कर दी। यथा- अ, आ, अि, आी, अु, अू, अे, अै, ओ, औ। (5) डॉ. श्याम सुन्दर दास का सुझाव था कि पंचम वर्ण के स्थान पर केवल अनुस्वार का प्रयोग किया जाए- पञ्च-पंच, कम्बल-कंबल, हिन्दी-हिंदी, कण्ठ-कंठ, गङ्गा-गंगा। (6) श्री निवास जी ने सुझाव दिया कि इस लिपि से महाप्राण ध्वनियाँ निकाल दी जायें और उनके स्थान पर अल्पप्राण ध्वनियों के नीचे कोई चिह्न (ऽ) लगाकर काम चलाया जाये। (7) 5 अक्टूबर 1941 ई. को हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग ने लिपि सुधार समिति की बैठक आयोजित की, जिसमें मात्राओं को उच्चारण क्रम में लगाने, छोटी 'इ' की मात्रा को व्यंजन के आगे लगाने तथा 'प्र' को 'पर', 'श्र' को श्र रूप में लिखने का सुझाव दिया गया। (8) सन् 1947 ई. में उत्तर प्रदेश सरकार ने आचार्य नरेन्द्र देव की अध्यक्षता में लिपि सुधार समिति गठित की। इसके प्रमुख सुझाव निम्न थे-

(1) 'अ' की बारह खड़ी भ्रामक है। (2) मात्राएँ यथा स्थान रहें, किन्तु उन्हें थोड़ा दाहिनी ओर लिखा जाय। (3) अनुस्वार एवं पंचम वर्ण के स्थान पर सर्वत्र शून्य (.) से काम चलाया जाय। (4) द्विविधि लिखे जाने वाले अक्षरों में से निम्न को स्वीकार किया जाये- अ, झ, ध, भ, ल। (5) संयुक्त वर्णों क्ष, त्र, ज्ञ को वर्णमाला में स्थान दिया जाये।

(9) सन् 1953 ई. में डॉ. राधा कृष्णन की अध्यक्षता में एक उच्चस्तरीय बैठक हुई जिसमें सुझाव दिया गया कि ह्रस्व इ की मात्रा व्यंजन से पूर्व लगाई जाय, ख, ध, भ, छ को क्रमशः ख, ध, भ, छ के रूप में लिखा जाय। (10) बाल गंगाधर तिलक का 'तिलक फांट' (1904-26) (11) गोरख प्रसाद का मात्राओं को व्यंजन के बाद दाहिने तरफ अलग रखने का सुझाव (जैसे- कुल-कुल) (12) राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द ने क़ ख़ ग़ ज़ फ़ पाँच अरबी फारसी ध्वनियों के चिह्नों के नीचे नुक्ता लगाने का रिवाज आरम्भ किया। (13) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' के जरिये खड़ी बोली को व्यावहारिक रूप प्रदान करने का प्रयास किया। (14) अयोध्या प्रसाद खत्री ने प्रचलित हिन्दी को 'ठेठ हिन्दी' की संज्ञा दी और ठेठ हिन्दी का प्रचार किया। उन्होंने खड़ी बोली को पद्य की भाषा बनाने के लिए आन्दोलन चलाया। (15) द्विवेदी जी की प्रेरणा से कामता प्रसाद गुरु ने 'हिन्दी व्याकरण' के नाम से एक वृहद व्याकरण लिखा। (16) भाषा के सर्वांगीण मानकीकरण का प्रश्न सबसे पहले 1950 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग ने ही उठाया। डॉ. धीरेन्द्र वर्मा की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गई, जिसमें डॉ. हरदेव बाहरी, डॉ. ब्रजेश्वर शर्मा, डॉ. माता प्रसाद

इकाई- 5

वर्ण विचार

- वर्ण उस मूल ध्वनि को कहते हैं, जिसके खंड न हो सकें, जैसे- अ, इ, क्, ख् इत्यादि।
- वर्णों के व्यवस्थित समूह (उच्चारण समूह) को वर्णमाला कहते हैं।
- हिन्दी में दो प्रकार की ध्वनियाँ हैं- स्वर और व्यंजन।
- हिन्दी में 44 वर्ण हैं, जिन्हें दो भागों में बाँटा जा सकता है- स्वर और व्यंजन।
- स्वर-

ऐसी ध्वनियाँ जिनका उच्चारण करने में अन्य किसी ध्वनि की सहायता नहीं होती, उन्हें स्वर कहते हैं। स्वर ग्यारह होते हैं- अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ।

इन्हें दो भागों में बाँटा जा सकता है- ह्रस्व और दीर्घ।

जिन स्वरों के उच्चारण में अपेक्षाकृत कम समय लगे, उन्हें ह्रस्व स्वर एवं जिन स्वरों को बोलने में अधिक समय लगे उन्हें दीर्घ स्वर कहते हैं।

ह्रस्व स्वर - अ, इ, उ, ऋ।

दीर्घ स्वर - आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ।

संयुक्त स्वर - भिन्न-भिन्न स्वरों के मिलाने से जो स्वर उत्पन्न होता है, उसे संयुक्त स्वर कहते हैं। जैसे- अ+ इ = ए, अ+उ=ओ, आ+ए= ऐ, आ+ओ= औ।

प्लुत स्वर - जिनके उच्चारण में दीर्घ स्वर से भी अधिक समय लगता है। 'प्लुत' स्वर शब्द का अर्थ है- 'उछलता हुआ।' प्लुत में तीन मात्राएँ होती हैं। इसकी पहचान दीर्घ स्वर के आगे तीन का अंक लिख देने से होती है, जैसे- ए!3, लड़के!3, हूँ!3, ओउम्। इसे त्रिमात्रिक स्वर भी कहते हैं।

हिन्दी स्वरों का वर्गीकरण-

(1) मात्रा के आधार पर - मात्रा के आधार पर स्वर दो प्रकार के होते हैं-

(क) ह्रस्व - अ, इ, उ, ऋ **(ख) दीर्घ** - आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, ऑ

(2) जीभ के आधार पर (जीभ के भाग-प्रयोग)-

अग्र स्वर - जिन स्वरों के उच्चारण में जीभ का अग्र भाग काम करता है- इ, ई, ए, ऐ।

मध्य स्वर - जिन स्वरों के उच्चारण में जीभ का मध्य भाग काम करता है- अ।

पश्च स्वर - जिन स्वरों के उच्चारण में जीभ का पश्च भाग काम करता है- आ, उ, ऊ, ओ, औ।

(3) हवा के नाक और मुँह के रास्ते निकलने के आधार पर - जिन स्वरों के उच्चारण में हवा केवल मुँह से निकलती है, उन्हें मौखिक या निरनुनासिक स्वर कहते हैं। अ, आ, ऑ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ। जिन स्वरों के उच्चारण में हवा नाक से भी निकलती है, उन्हें अनुनासिक स्वर कहते हैं। जैसे- अँ, आँ, इँ, ईं, उँ, ऊँ, एँ, ऐं, ओं, औं।

(4) ओष्ठों (ओंठों, होंठ) की स्थिति के आधार पर - कुछ स्वरों के उच्चारण में ओष्ठ वृत्तमुखी या गोलाकार होते हैं। इस आधार पर दो भेद होते हैं-

वृत्तामुखी - जिन स्वरों के उच्चारण में ओंठ वृत्तमुखी या गोलाकार होते हैं- उ, ऊ, ओ, औ, ओं।

अवृत्तामुखी - जिन स्वरों के उच्चारण में ओंठ वृत्तमुखी या गोलाकार नहीं होते हैं- अ, आ, इ, ई, ए, ऐ।

(5) जीभ के उठने के आधार पर - जीभ के उठने से मुख-विवर सँकरा हो जाता है। इसलिए जब जीभ बहुत ऊपर उठ जाती है तो उसे संवृत तथा बहुत नीचे होती है तो विवृत कहते हैं। बीच में अर्ध संवृत तथा अर्धविवृत भी होते हैं।

(क) संवृत - इ, ई, उ, ऊ। (ख) अर्ध संवृत - ऐ, ओ।

(ग) अर्थ विवृत - ए, अ, औ, ऑ। (घ) विवृत - आ।

(6) प्रकृति के आधार पर - स्वर, प्रकृति के आधार पर मूल और संयुक्त दो प्रकार के हैं-

(क) मूल स्वर - अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ओ। (ख) संयुक्त स्वर - ऐ, औ।

(7) उच्चारण स्थान के आधार पर स्वरों का वर्गीकरण-

ध्वनि का नाम (उच्चारण स्थान)	-	स्वर
कंठ्य (कंठ)	-	अ, आ
तालव्य (तालु)	-	इ, ई
मूर्धन्य (मूर्धा)	-	ऋ
ओष्ठ्य (ओष्ठ)	-	उ, ऊ
नासिक्य (नासिका)	-	अं, अँ
कंठ- तालव्य (कंठ-तालु)	-	ए, ऐ
कंठोष्ठ्य (कंठ- ओष्ठ)	-	ओ, औ।

- जाति के अनुसार भी स्वरों के दो भेद हैं- सजातीय (सवर्ण) और विजातीय (असवर्ण)

(क) सजातीय (सवर्ण) - समान स्थान और प्रयत्न से उच्चारित होने वाले स्वरों को सजातिय स्वर कहते हैं।
जैसे - अ-आ, इ-ई, उ-ऊ इत्यादि।

(ख) विजातीय (असवर्ण) - जिन स्वरों के उच्चारण स्थान एवं प्रयत्न एक से नहीं होते उन्हें विजातीय स्वर कहते हैं।
जैसे - अ-इ, आ-ऊ, उ-ई इत्यादि।

- सभी स्वर घोष (सघोष) वर्ण होते हैं।

व्यंजन -

जो ध्वनियाँ स्वरों की सहायता से बोली जाती हैं, उन्हें व्यंजन कहते हैं। इन्हें पाँच वर्गों तथा स्पर्श, अन्तस्थ एवं ऊष्म व्यंजनों में बाँटा जा सकता है।

स्पर्श:- क वर्ग - क् ख् ग् घ् (ङ्)
च वर्ग - च् छ् ज् झ् (ञ्)
ट वर्ग - ट् ठ् ड् ढ् (ण्)
त वर्ग - त् थ् द् ध् (न्)
प वर्ग - प् फ् ब् भ् (म्)
अन्तस्थ - य् र् ल् व्
ऊष्म - श् ष् स् ह्

संयुक्ताक्षर - इसके अतिरिक्त हिन्दी में तीन संयुक्त व्यंजन भी होते हैं-

क्ष - क् + ष् (+अ)
त्र - त् + र् (अ)
ज्ञ - ज् + ञ (+अ)

हिन्दी वर्णमाला में 11 स्वर हैं और 33 व्यंजन अर्थात् कुल 44 वर्ण हैं तथा तीन संयुक्ताक्षर हैं।

राजस्थानी ग्रन्थागार

इकाई- 6

हिन्दी साहित्य का इतिहास

- 'इतिहास' शब्द का शाब्दिक अर्थ है- ऐसा ही था, ऐसा ही हुआ।
- इतिहास शब्द इति+ह+अस् के योग से बना है जिसका अर्थ है निश्चित रूप से समाप्त होना।
- अतीत के किसी भी तथ्य, तत्व एवं प्रवृत्ति के वर्णन, विवरण व विश्लेषण को, जो कि काल विशेष या काल क्रम की दृष्टि से किया गया हो, इतिहास कहलाता है।
- डॉ. नगेन्द्र के अनुसार - 'साहित्य का इतिहास बदलती हुई अभिरुचियों और संवेदनाओं का इतिहास होता है, जिसका सीधा संबंध आर्थिक और चिंतनात्मक परिवर्तन से है।
- साहित्य का इतिहास-साहित्य के अन्तर्गत सृजित ग्रन्थों की विवरणिका और वह भी क्रमिक रूप से प्रस्तुत करने को कहते हैं।
- साहित्य और समाज का सम्बन्ध अक्षुण्ण है। समाज, इतिहास, दर्शन और कविता सभी परिवर्तनशील हैं किन्तु यह सुनिश्चित है कि साहित्य समाज से प्रभाव ग्रहण करता है। इसी क्रम में समाज को बदलने में साहित्य की महती भूमिका से इन्कार नहीं किया जा सकता है। इतिहास, दर्शन और कविता, कला सभी अपने समय की पदचाप को पहचान कर ही समृद्ध हुए हैं।
- हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन की परम्परा साहित्य और इतिहास के चिरन्तन सम्बन्ध को दर्शाती है। भारत के विद्वान् आलोचकों ने अपनी सर्जनात्मक प्रतिभा के बल पर साहित्य के रूप में ऐसी बहुमूल्य विधि प्रदान की है जो हजारों वर्षों की सीमाओं को लांघ कर आज भी साहित्यानुरागियों के हृदय को प्रभावित करती है।
- साहित्य के इतिहास में काल विभाजन का मुख्य प्रयोजन विभिन्न ऐतिहासिक परिस्थितियों के सन्दर्भ में साहित्य की प्रकृति एवं प्रवृत्ति को स्पष्ट करना है।
- डॉ. गणपति चन्द्र गुप्त के शब्दों में 'साहित्य की अन्तर्निहित चेतना के क्रमिक विकास, उसकी परम्पराओं के उत्थान, पतन एवं उनकी विभिन्न प्रवृत्तियों के दिशा-परिवर्तन आदि के काल क्रम को स्पष्ट करना ही काल विभाजन का लक्ष्य होता है।'

अतीत के तथ्यों का वर्णन-विश्लेषण, जो कालक्रमानुसार किया गया हो, इतिहास कहा जाता है। इतिहास के प्रति वस्तुपरक दृष्टिकोण जिसमें तर्कपूर्ण शैली एवं गवेषणात्मक पद्धति का आधार लिया गया हो, उसे वैज्ञानिक रूप प्रदान करता है, जबकि इतिहास के प्रति आत्मपरक दृष्टिकोण एवं ललित शैली उसे 'कलात्मक' रूप देते हैं।

इतिहास लेखन के प्रति भारतीय दृष्टिकोण आदर्शमूलक एवं अध्यात्मवादी रहा है। इतिहास के चार लक्षण यूनानी विद्वान् हिरोदोतस (456-545 ई. पू.) ने निर्धारित किए हैं :

(क) इतिहास वैज्ञानिक विधा है, अत: इसकी पद्धति आलोचनात्मक होती है।

(ख) यह मानविकी के अन्तर्गत आता है, अत: मानव जाति से सम्बन्धित है।

(ग) इसके तथ्य, निष्कर्ष प्रमाण पर आधारित होते हैं।

(घ) यह अतीत के आलोक में भविष्य पर प्रकाश डालता है।

पाश्चात्य इतिहास दर्शन विकासवादी दृष्टिकोण को मान्यता देता है। डार्विन का विकासवाद प्राणिशास्त्र पर, मार्क्स का विकासवाद अर्थशास्त्र पर, स्पेंसर का विकासवाद भौतिक शास्त्र पर लागू होता है। भले ही कुछ लोग विकासवादी सिद्धान्त के विरोधी रहे हैं, किन्तु सत्य यह है कि विकासवाद के बिना इतिहास को नहीं समझा जा सकता।

साहित्य के इतिहास में हम सहित्यिक रचनाओं का अध्ययन ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में करते हैं। साहित्य के इतिहास को समझने के लिए तत्कालीन परिस्थितियों का अध्ययन आवश्यक है। साथ ही इनके रचयिताओं की परिस्थितियों एवं मनोभावनाओं को जानना भी आवश्यक है।

आचार्य शुक्ल-साहित्य के इतिहास को जनता की चित्तवृत्ति का इतिहास मानते हैं। जनता की चित्तवृत्ति तत्कालीन परिस्थितियों से परिवर्तित होती है, अत: साहित्य का स्वरूप भी इन परिस्थितियों के अनुरूप बदलता है। शुक्ल जी की यह भी धारणा है कि साहित्य का इतिहास कवियों का वृत्त संग्रह न होकर साहित्य की प्रवृत्ति का इतिहास होता है। विभिन्न कालखण्डों की सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक परिस्थितियों के परिणामस्वरूप साहित्य में जो प्रवृत्तियाँ प्रवर्तित होती हैं, उन्हीं के सन्दर्भ में कवियों की रचनाओं का अध्ययन किया जाना चाहिए।

फ्रेंच विद्वान तेन ने यह प्रतिपादित किया कि साहित्य की विभिन्न प्रवृत्तियों के मूल में मुख्यत: तीन प्रकार के तत्व सक्रिय रहते हैं- जाति, वातावरण और क्षण विशेष। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि साहित्य के इतिहास को समझने के लिए उससे सम्बन्धित जातीय परम्पराओं, राष्ट्रीय और सामाजिक वातावरण एवं सामयिक परिस्थितियों का अध्ययन-विश्लेषण परमावश्यक है। विभिन्न विवेचन के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि साहित्य के इतिहास का अध्ययन-विश्लेषण युगीन चेतना एवं साहित्यकार की वैयक्तिक प्रवृत्तियों के परिप्रेक्ष्य में किया जाना चाहिए। हिन्दी साहित्य के इतिहास दर्शन के अन्तर्गत निम्न तथ्यों का समावेश किया जा सकता है-

(1) साहित्यकार की प्रतिभा और व्यक्तित्व का अध्ययन, (2) युगीन चेतना का अध्ययन, (3) साहित्यिक एवं सांस्कृतिक परम्पराओं का अध्ययन, (4) साहित्यकार की नैसर्गिक प्रतिभा एवं परम्परा का द्वन्द्व एवं उसके स्रोत का अध्ययन। (5) साहित्यकार द्वारा अभीष्ट की प्राप्ति।

इससे स्पष्ट है कि साहित्य का इतिहास आलोचना नहीं है। इतिहासकार कृति का मूल्यांकन युगीन प्रवृत्तियों के संदर्भ में करता है, स्वतंत्र रूप में नहीं। आलोचना में जहाँ मूल्यांकन पर बल दिया जाता है, वहीं इतिहास में युगीन प्रवृत्तियों के सापेक्ष साहित्य के विश्लेषण पर।

हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन की पद्धतियाँ

हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन की जो प्रमुख पद्धतियाँ प्रचलित रही हैं, उनका विवरण निम्नवत् है :

(1) वर्णानुक्रम पद्धति - इस पद्धति को 'वर्णमाला पद्धति' भी कहा जाता है। इसमें लेखकों, कवियों का परिचयात्मक विवरण उनके नामों के वर्णानुक्रम के अनुसार किया जाता है। इस पद्धति में कबीर और केशव का विवेचन एक साथ इसलिए करना पड़ेगा, क्योंकि दोनों के नाम 'क' अक्षर से प्रारम्भ होते हैं, भले ही वे कालक्रम की दृष्टि से भक्तिकाल एवं रीतिकाल के कवियों में अलग-अलग कालों से सम्बन्धित हों। गार्सा-द-तासी एवं शिवसिंह सेंगर ने अपने इतिहास ग्रन्थों में वर्णानुक्रम पद्धति का ही प्रयोग किया है। इस पद्धति से लिखे हुए इतिहास ग्रन्थ अनुपयोगी, दोषपूर्ण माने जाते हैं। ऐसे इतिहास ग्रन्थ 'साहित्यकार कोश' तो कहे जा सकते हैं, उन्हें इतिहास ग्रन्थ कहना अनुचित है।

(2) कालानुक्रमी पद्धति - इस पद्धति में कवियों एवं लेखकों का विवरण ऐतिहासिक कालक्रमानुसार तिथिक्रम से होता है। प्राय: कृतिकार की जन्मतिथि को आधार मानकर ही इतिहास ग्रन्थ में उनका क्रम निर्धारण किया जाता है। जार्ज ग्रियर्सन एवं मिश्र बन्धुओं ने इसी पद्धति पर अपने इतिहास ग्रन्थ लिखे हैं। साहित्य का इतिहास रचनाकारों का जीवन परिचय एवं उनकी कृतियों के उल्लेख मात्र से पूरा नहीं होता अपितु उसमें युगीन परिस्थितियों के सन्दर्भ में कवि की प्रवृत्तियों का विश्लेषण भी किया जाना चाहिए। इसके अभाव में वह इतिहास ग्रंथ न रहकर कवियों का वृत्त संग्रह मात्र बन जाता है।

(3) वैज्ञानिक पद्धति - वैज्ञानिक पद्धति में इतिहास लेखक पूर्णत: निरपेक्ष एवं तटस्थ रहकर तथ्य संकलन करता है और उन्हें क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत कर देता है। इसमें क्रमबद्धता एवं तर्क पुष्टता अनिवार्य रूप में होती है। इस पद्धति में भी वही दोष है जो कालक्रमानुसारी पद्धति में है। इतिहास तथ्य संकलन मात्र न होकर व्याख्या एवं विश्लेषण की अपेक्षा भी करता है। इन विद्वानों के तथ्य संग्रह उपयोगी तो हो सकते हैं पर वह पूर्ण सफल तभी कहला सकते हैं, जब व्याख्या एवं विश्लेषण पर अपेक्षित ध्यान दें।

(4) विधेयवादी पद्धति - साहित्य का इतिहास लिखने में यह पद्धति सर्वाधिक उपयोगी सिद्ध हुई है। इस पद्धति के जन्मदाता वेन माने जाते हैं, जिन्होंने विधेयवादी पद्धति को तीन शब्दों में बाँटा है- जाति, वातावरण, और क्षण विशेष।

साहित्य के इतिहास को समझने के लिए उससे सम्बन्धित जातीय परम्पराओं, तद्युगीन वातावरण एवं परिस्थितियों का वर्णन-विश्लेषण अपेक्षित होता है। हिन्दी में साहित्य का इतिहास लिखने की इस पद्धति का सूत्रपात आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने किया। उन्होंने कवियों की प्रवृत्तियों का विश्लेषण तद्युगीन परिस्थितियों एवं वातावरण के परिप्रेक्ष्य में किया। उनके अनुसार 'प्रत्येक देश का साहित्य

इकाई -7

आदिकाल

- आदिकालीन साहित्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ -

1. ऐतिहासिकता का अभाव, 2. युद्ध वर्णन में सजीवता, 3. प्रामाणिकता में संदेह, 4. वीर एवं श्रृंगार रस की प्रधानता, 5. आश्रयदाताओं की प्रशंसा, 6. संकुचित राष्ट्रीयता, 7. कल्पना की प्रचुरता, 8. विविध छन्दों का प्रयोग, 9. डिंगल-पिंगल भाषा का प्रयोग, 10. अलंकारों का स्वाभाविक समावेश।

हिन्दी का प्रथम कवि-

1. शिवसिंह सेंगर के अनुसार - पुष्य या पुण्ड (10वीं शती)
2. राहुल सांकृत्यायन के अनुसार - सरहपाद (769 ई.)
3. डॉ. नगेन्द्र के अनुसार - सरहपाद (769 ई.)
4. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार - राजा मुंज (993 ई.)
5. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी के अनुसार - राजा मुंज (993 ई.)
6. डॉ. रामकुमार वर्मा के अनुसार - स्वयंभू (693 ई.)
7. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार - अब्दुल रहमान (12वीं शताब्दी)
8. डॉ. गणपति चन्द्र गुप्त के अनुसार - शालिभद्र सूरि (1184 ई.)
9. डॉ. बच्चन सिंह के अनुसार - विद्यापति (मैथिली हिन्दी) (15 वीं शती)

विशेष- राहुल सांकृत्यायन द्वारा स्वीकृत सिद्ध कवि 'सरहपा या सरहपाद' को ही हिन्दी का सर्वप्रथम कवि माना जाता है।

- **हिन्दी की प्रथम रचना**

हिन्दी के प्रथम कवि 'सरहपा' की जो रचनाएँ मिलती हैं, वे सभी मुक्तक हैं। अतः प्रथम रचना के नाम पर उनकी किसी एक पुस्तक को प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। 'श्रावकाचार' (933ई.) प्रथम रचना मानी जाती है। जैन कवि आचार्य देवसेन इसके रचयिता हैं। इस रचना में 250 दोहों में श्रावक धर्म के सिद्धान्तों का वर्णन है। गृहस्थ धर्म उस वर्णन का केन्द्र है।

- **आदिकाल की प्रमुख शैलियाँ**-

आदिकाल में मुख्यतः दो प्रकार की शैलियों का प्रयोग किया जाता था-

(1) डिंगल शैली (2) पिंगल शैली

(1) डिंगल शैली- जब अपभ्रंश के साथ राजस्थानी भाषा के शब्दों का प्रयोग किया जाता था, तो वह डिंगल शैली कहलाती थी। इसमें कठोर, कर्कश शब्दावली का प्रयोग अधिक होता था।

(2) पिंगल शैली- जब अपभ्रंश के साथ ब्रज भाषा के शब्दों का प्रयोग होता था, तो वह पिंगल शैली कहलाती थी। इसमें कोमलकान्त पदावली का प्रयोग अधिक किया जाता था।

अपभ्रंश + राजस्थानी का योग = डिंगल

अपभ्रंश + ब्रजभाषा का योग = पिंगल

- हिन्दी साहित्य के जन्म काल/प्रारम्भिक काल को आदिकाल कहा जाता है।
- भारतीय राजनीतिक दृष्टिकोण से जब भारत में हर्षवर्धन के साम्राज्य का पतन हो रहा था, उसी समय हिन्दी साहित्य का उदय हो रहा था।

- हिन्दी साहित्य के आदिकाल की सामग्री में 'उत्तर अपभ्रंश' की सभी रचनाओं का समावेश किया गया है।
- उत्तर अपभ्रंश को 'पुरानी हिन्दी' अथवा 'अवहट्ठ' के नाम से भी पुकारा जाता है।
- आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने आदिकाल को 'अत्यधिक विरोधों एवं व्याघातों का युग' कहा है।
- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने पुरानी हिन्दी (अपभ्रंश) को 'प्राकृताभास हिन्दी' कहा है।
- आचार्य शुक्ल ने आदिकाल का समय महाराज भोज के समय से लेकर हम्मीरदेव के समय के कुछ पीछे तक माना है।
- डॉ. नगेन्द्र के अनुसार आदिकाल का समस्त हिन्दी साहित्य आक्रमण और युद्ध के प्रभावों की मनः स्थितियों का प्रतिफलन है।
- **आदिकाल की समय सीमा**-
- विभिन्न विद्वानों ने आदिकाल की समय-सीमा को इस प्रकार स्वीकार किया है-

(1) जार्ज ग्रियर्सन- 643 ई. से 1400 ई. तक (2) मिश्र बन्धु- 643 ई. से 1389 ई. तक

(3) राहुल सांकृत्यायन- 760 ई. से 1300 ई. तक (4) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल- 993 ई. से 1318 ई. तक

(5) डॉ. रमाशंकर शुक्ल 'रसाल'- 1000 ई. से 1343 ई. तक

आदिकालीन साहित्य का विभाजन-

- आदिकालीन साहित्य को मुख्यतः चार भागों में विभाजित किया जाता है। जैसे-

(1) रासो साहित्य, (2) रास या जैन साहित्य, (3) सिद्ध साहित्य, (4) नाथ साहित्य

- आदिकाल में कुछ रचनाएँ ऐसी भी प्राप्त होती हैं जिनमें उक्त चारों ही प्रकार के साहित्यों के लक्षण प्राप्त नहीं होते हैं। अतः डॉ. नगेन्द्र ने ऐसी रचनाओं को 'आदिकालीन स्वतंत्र साहित्य' के नाम से वर्गीकृत किया है जबकि आचार्य शुक्ल इन रचनाओं को 'आदिकाल की फुटकल रचनाएँ' श्रेणी में शामिल करते हैं।
- आचार्य शुक्ल ने उक्त चारों में से केवल 'रासो साहित्य' को ही मूल साहित्य न मानकर 'साम्प्रदायिक शिक्षा मात्र' कहकर पुकारा है।
- आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उपर्युक्त चारों को ही आदिकालीन साहित्य में शामिल माना है।
- **आदिकाल की प्रमुख समस्याएँ**-

(1) हिन्दी का प्रथम कवि कौन?, (2) नामकरण की समस्या, (3) सीमा निर्धारण की समस्या, (4) 'किस साहित्य की प्रधानता' सम्बन्धी समस्या, (5) कवियों के सही चुनाव की समस्या, (6) रस की प्रधानता की समस्या, (7) भाषा के स्वरूप निर्धारण की समस्या।

रासो साहित्य की प्रमुख विशेषताएँ-

1. अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णनों की अधिकता- उत्साह, संघर्ष और युद्ध के बीच भी राजाओं के यशोगान, आश्रयदाता को वीर, पराक्रमी, दानवीर, दृढ़ प्रतिज्ञ और अनुपम सौन्दर्यशाली सिद्ध कर अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन।
2. सामंती समाज-संस्कृति का यथार्थ चित्रण- इसमें सामंती सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक व्यवस्था के अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन। सामाजिक कुरीतियों-बहुविवाह, अनमेल-विवाह, गन्धर्व-विवाह, सती प्रथा का वर्णन।
3. ऐतिहासिकता, राष्ट्रीयता का अभाव- इतिहास प्रसिद्ध चरित्र नाटकों को स्थान, चरित्र वर्णन इतिहास की कसौटी पर खरे नहीं, कल्पना की प्रधानता।
4. युद्धों का जीवन्त वर्णन- आश्रयदाताओं को युद्ध के लिए उत्तेजित करना, युद्ध के निकट दृश्यों को अपनी खुली आँखों से देखना, सामंती परिवेश और जीवन की अपेक्षा सामान्य जीवन का अभाव।
5. संदिग्ध और अर्द्धप्रामाणिक रचनाओं की बहुलता-विषयवस्तु और शिल्प की दृष्टि से असंदिग्ध। तिथि, सम्वत् तथा समय से अर्द्ध प्रामाणिक।